पंचायतों में औरतों की भागीदारी रंग लाएगी

मणिमाला

दो साल पहले केंद्र की सरकार ने नया पंचायत कानून बनाया। इस कानून के हिसाब से हर पंचायत में तीस प्रतिशत जगह सिर्फ औरतों के लिए होंगी। यही नियम नगरपालिकाओं के लिए भी होगा। कुछ सरकारें इससे पहले ही तीस प्रतिशत जगह औरतों को देने का फैसला कर चुकी थीं

शुरुआती दौर में बहस

जब यह नियम बनाया गया था तब खूब बहस हुई थी। कुछ लोग कहते थे कि बैसाखी देने से कुछ नहीं होगा। इससे तो औरत और भी कमजोर होगी। दूसरे लोगों को लगेगा कि उनमें अपनी ताकत ही नहीं है। कुछ लोग यह भी कहते थे कि उन्हें ही टिकट मिलेगी जो किसी ताकतवर राजनेता की रिश्तेदार होंगी।

ऐसा नहीं कि हर जगह विरोध ही हुआ था। महिला संगठनों का कहना था कि एक बार भले ही वे बैसाखी से चलें। दूसरी बार चलना-बोलना सीख जायेंगी। यह भी सही है कि पहले ताकतवर लोगों की रिश्तेदार ही चुनाव लड़ेंगी। पर बाद में साधारण औरतें भी उतरेंगी।

सिर्फ बहस नहीं, हिंसा भी

पंचायत में औरतों को जगह देने के सवाल पर सिर्फ बहस नहीं हुई थी। कहीं-कहीं तो हिंसा भी हुई। दो साल पहले उड़ीसा में पंचायत चुनाव हुए थे। कुल बावन लोग इसी सवाल पर मारे गये थे। तीन दफा चुनाव स्थगित करने पड़े थे। जब बम्बई महानगरपालिका के चुनाव होने थे तब शिव सेना के प्रमुख बाल ठाकरे ने कहा था कि अब बम्बई महापालिका वेश्यालय बन जायेगा।

इन सबके बावजूद औरतें चुनाव के मैदान में

आईं। चुनी गईं। घर-गृहस्थी के घेरे से बाहर आईं। जन समस्याओं को हल करने का मोर्चा संभाला। भुवनेश्वर महापालिका में तो महापौर और उपमहापौर दोनों ही औरतें बनीं। कोल्हापुर महापालिका में भी महापौर औरत बनीं।

नये अनुभव

उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में पंचायत चुनाव हुए। ***ऐसा नहीं कि औरतें चुन कर आईं तो समाज बदल गया। लेकिन हां, चर्चा के मुद्दे जरूर बदल गये। बिजली, पानी, बच्चों की पढ़ाई और स्वास्थ्य से संबंधित जो सवाल राजनीति के मकड़जाल में उलझ कर रह जाते थे, उन पर चर्चा होने लगी। सबसे ज़्यादा असर पड़ा आम महिलाओं पर***। वे गांव पंचायत में रुचि लेने लगीं। कहीं-कहीं तो जमीन से जुड़ी औरतें चुनाव लड़ीं और जीत कर आईं।

मध्य प्रदेश में सेवा से जुड़ी कई बहनें पंचायत चुनाव जीत कर आईं। 'सेवा इंदौर' की तो तीन कम उम्र औरतों ने सरपंच की जिम्मेदारी संभाली। हमें लगता है कि 'सबला' पढ़ने वाली हमारी बहनों को उनके बारे में जानना चाहिए। इसीलिए उनके बारे में संक्षिप्त जानकारी दे रहे हैं।

प्रेमलता बहन

प्रेमलता बहन कोदरियां पंचायत की सरपंच चुनी गई हैं। वे आठवीं तक पढ़ी हैं। उनके पति नौकरी करते हैं। उनकी शुरू से इच्छा थी कि वे अपने गांव समाज के लिए कुछ करें। उनके घर के बुजुर्गों ने भी उनका साथ दिया। कभी कोई काम करने से नहीं रोका। कभी घर के चौकठे में बांध कर नहीं रखा।

वे स्वयं 'सेवा इंदौर' गईं। 'सेवा इंदौर' की मंत्री मनोरमा जोशी से सलाह मशविरा करके उन्होंने अपने गांव का सर्वेक्षण किया। फिर बालवाड़ी शुरू की। उसके बाद बचत समिति बनाई। वे अपने गांव में काफी लोकप्रिय हो गईं। गांव के लोग उन्हें इतना प्यार करने लगे कि सरपंच पद के लिए खड़ी होने की सलाह देने लगे। वे खड़ी हुईं। ग्रामीणों तथा 'सेवा' इंदौर की मदद से वे जीत गईं। उनकी उम्र महज छब्बीस साल है।

तेजु बहन

तेजु बहन इंदौर के ही अहीर खेड़ी की सरपंच चुनी गईं। बचपन में ही उनके साथ एक दुर्घटना हो गई थी। तीन साल की थी तब रेल दुर्घटना के चपेट में आ गईं। अजमेर अस्पताल में भर्ती हुईं। जब अस्पताल से बाहर निकलीं तो बैसाखी के सहारे। एक पांव घुटने से काटना पड़ा था।

आज के जमाने में जब कोई अच्छी-खासी लड़कियों से ब्याह नहीं करता तो लंगड़ी बेटी से कौन ब्याह करेगा, यह चिंता उनके मां-बाप को सताती रहती। इसी चिंता के मारे उन्होंने पांच साल की उम्र में उनका ब्याह कर दिया। तकदीर ने फिर एक बार दांव खेला। नौ साल की उम्र में वे विधवा हो गईं। पति गुजर गया। वापस पीहर आ गईं।

लड़की का असली घर ससुराल होता है। पति नहीं तो कुछ नहीं। ऐसा ही मानते रहे उसके माता-पिता। सो, एक बार फिर अपनी बेटी की शादी कर दी। दूल्हे का चाल-चलन नहीं देखा। घर-परिवार नहीं देखा। अठ्ठारह साल की उम्र में जब दोबारा ससुराल गई तब दुखों का पहाड़ खड़ा था उसकी अगवानी के लिए।

पति जुआरी, शराबी और नाकारा निकला। घर में दाना नहीं। चूल्हे में आग नहीं। लेकिन मार-पीट, गाली-फजीहत रोज-रोज। कई साल निकाल दिये इसी में। इस बीच तीन बच्चे भी हुए। दो बेटियां। एक बेटा। उन्हें बड़ी ख्वाहिश थी कि उनके बच्चों की तकदीर उनकी तरह न हो।

अपने बच्चों की तकदीर बदलने का सपना लिए वे 'सेवा' के कार्यकर्ताओं से मिलीं, सेवा की सदस्य बनीं। कार्यकर्ता बनीं। पांचवीं तक पढ़ाई की। सेवा द्वारा संचालित बालवाड़ी की शिक्षिका बनीं। इसी साल 836 मतों से जीत कर अपने गांव की सरपंच बनीं। अड्ढाईस साल की तेजु बहन जब तीन साल की थीं पांव गवां कर बैसाखी पर चलना सीखा था। आज लकड़ी की बैसाखी भले ही हो, बाकी सारी बैसाखियां छोड़ चुकी हैं वे।

शशि बहन गामोड़

तेजु बहन की तरह ही मुसीबतों का सामना करते करते शशि बहन ने एक दिन अपनी नन्ही बिटिया की तकदीर खुद लिखने की ठान ली। छोटी सी बेटी को गोद में लिए चली आई थी 'सेवा' के दफ्तर। सेवा ने बालवाड़ी में पढ़ाने का काम उन्हें सौंपा। बड़े ही आत्मविश्वास और समर्पण की भावना के साथ उन्होंने बालवाड़ी और महिला मंडल का काम संभाला।

जब वे 'सेवा' के दफ्तर में आईं थीं तो उनका सपना था अपनी बेटी को अपने पैरों पर खड़ा करना। आज उनका सपना बन गया है गांव को स्वावलंबी बनाना। उनका यह सपना सबको अच्छा लगा। सबको अपना लगा।

इस साल गांव वालों ने उन्हें सरपंच का चुनाव लड़ने को कहा। वे लड़ीं। जीत गईं। अभी पच्चीस साल की हैं। सिर्फ पच्चीस साल की। गांव को बेहतर बनाने में जुट गई हैं। उन्हें यकीन है कि उनकी बेटी भी बड़ी होकर इस सपने को साकार करने में लग जाएगी।

शशि बहन की शादी भोपाल में हुई थी। साल भर मजे में गुजरा। उसके बाद परेशानियां शुरू हुईं। हालांकि वे आदिवासी समाज की थीं। वह भी पढ़ी-लिखी। आठवीं पास। आम तौर पर आदिवासी समाज में दहेज का रिवाज नहीं होता। पर शहर में आकर इन्हें भी यह रोग लग गई। ये भी दहेज मांगने लगे। शशि बहन वापस मायके चली आईं। अपनी बिटिया को लेकर। साथ में एक सपना लेकर। अपनी तकदीर तो आप न लिख सकीं, लेकिन अपनी बेटी को इस लायक जरूर बनाएंगी कि वह अपनी तकदीर आप लिख सके। आज यह सपना पूरे गांव की तकदीर बदलने लगा है।

उम्मीदें तो हैं

प्रेमलता बहन, तेजु बहन और शशि बहन को देख कर लगता है कि आज नहीं तो कल, पंचायत में औरतों की भागीदारी रंग जरूर लायेगी। हां, इसकी एक शर्त है। 'सेवा' जैसा कोई संगठन, कोई संस्था हाथ बंटाये। □